Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

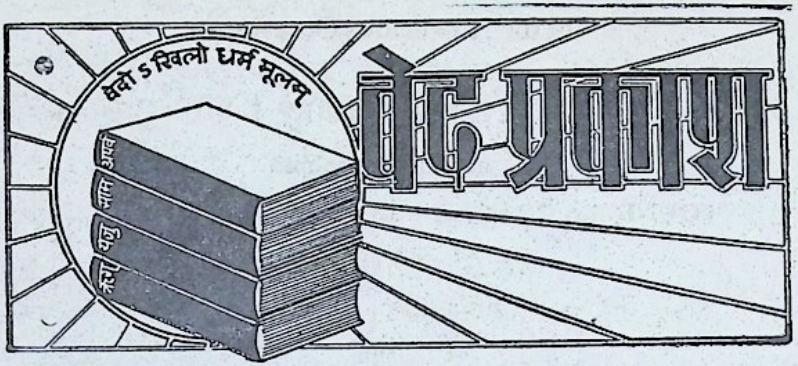

विदेश में वैदिक साहित्य

गोविन्दराम हासानन्द प्रकाशन के संचालक विजयकुमार जी के सुपुत्र अनिलकुमार आर्य वैदिक साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए ३८वें अन्तर्राष्ट्रीय फ्रैंकफर्त पुस्तक मेला ८६ में भाग लेने के लिए २९ सितम्बर को (जर्मनी) रवाना।

फ्रैंकफर्त (जर्मनी) में प्रतिवर्ष पुस्तक-मेला होता है। इस वर्ष के पुस्तक-मेले का विषय ही 'भारत—बदलाव में निरन्तरता' है। फ्रैंकफर्त पुस्तक-मेले में किसी देश को विषय बनाकर पहली बार चर्चा होगी। इस बार भारत की संस्कृति-साहित्य और कला पर विशेष चर्चा होगी। भारत का प्रतिनिधित्व करने भारत के एक सौ प्रकाशक इसमें भाग लेने गये हैं। इस अन्तर्राष्ट्रीय मेले में दुनिया-भर से सात हजार प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता भाग ले रहे हैं।

ऐसे महत्त्वपूर्ण पुस्तक मेले में आर्य वैदिक साहित्य के प्रदर्शन के लिए फ्रैंकफर्त (जर्मनी) जाना एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

आशा की जाती है कि इस मेले से वैदिक साहित्य के विश्व में प्रचार-प्रसार को विशेष बल मिलेगा।

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली-६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

On the Auspicious Occasion
of
D. A. V. College Centenary Celebration

We announce to publish

FOUNDERS OF SCIENCES IN ANCIENT INDIA

IN TWO VOLUME

By. Dr Svami Satya Prakash Sarasvati

Contents

I Atharvan—The First Discoverer of Fire
II Fire leads to Mechanical Devices
III Dīrghatamas—The Discoverer of the Vedic Era
IV Gārgya—The First Enumerator of Consteliations
V Bharadvāja Presides over the First Medicinal Plants Symposium
VI Ātreya Punarvasu and His Academy of Medicine
VII Suśruta—The Father of Surgery
VIII Kaṇāda—The First Expounder of Realism, Law of Causation and Atomic Theory
IX Medhātithi—First to Extend Numerals to Billions
X Āryabhata lays Foundations of Algebra
XI Lagadha—The First to Rationalize Astronomy
XII Lātadeva & Sriṣeṇa Introduce Greek Astronomy to India
XIII Baudhāyana—The First Great Geometer

The volume is printed on sunlit offset paper by Offset process.
Full cloth bound, Pages 700, Price Rs. 500/-
Send Your Order with draft to
GOVINDRAM HASANAND
4408, Nai Sarak, Delhi-110006

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ३६, अंक ३] वार्षिक मूल्य : दस रुपये [अक्टूबर १९८६

सम्पा० : विजयकुमार आ० सम्पादक : स्वा० जगदीश्वरानन्द सरस्वती

मरा हुआ धर्म कहीं तुम्हें न मार दे !

—प्रो० रामविचार एम० ए०, दयानन्द कॉलेज, हिसार

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

(यजु० ३१।१६)

जो (देवाः) विद्वान् लोग (यज्ञेन) श्रेष्ठतम कर्मों के द्वारा पूजनीय परमेश्वर की (अयजन्त) पूजा करते हैं (तानि) वे श्रेष्ठ कर्म आदि (धर्माणि) धारणारूप धर्म (प्रथमानि) अनादि रूप से मुख्य (आसन्) हैं (ते) वे विद्वान् (महिमानः) महत्त्व से युक्त हुए (यत्र) जिस सुख में (पूर्वे) इस समय से पूर्व हुए (साध्याः) साधनों को किये हुए (देवाः) प्रकाशमान विद्वान् (सन्ति) हैं उस (नाकम्) सब दुःख-रहित मुक्तिसुख को (ह) ही (सचन्त) प्राप्त होते हैं।

मन्त्र में कहा गया है कि जो विद्वान् श्रेष्ठ कर्मों द्वारा ईश्वर की पूजा करते हैं, वे महत्त्व से युक्त हुए विद्वान् पूर्वविद्वानों की भाँति मोक्ष को प्राप्त होते हैं। जिन श्रेष्ठ कर्मों को वे अपनाते हैं वे धारणारूप धर्म अनादि रूप से मुख्य हैं। वे श्रेष्ठ कर्म क्या हैं, इनकी चर्चा आगे की जाएगी। सबसे पहले हम धारणारूप धर्म की व्याख्या कर रहे हैं।

मनुष्य संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है, इसपर सभी सहमत हैं। परन्तु मनुष्य की मनुष्यता इसी बात पर निर्भर है कि वह सोच-समझकर कर्म करे। महर्षि यास्क ने इसी बात को कहा है—

मनुष्यो मननात्, मत्वा कर्माणि सीव्यति।

मनुष्य मनन करने से ही मनुष्य कहलाता है। जो सोच-समझकर कर्म करता है, वही मनुष्य है।

यह जड़ सृष्टि सामान्य रूप से प्राणियों के और विशेष रूप से मनुष्यों के उपयोग के लिए बनाई गई है। जड़ जगत् स्वयं अपना उपभोग नहीं कर सकता। इसके उपभोग के लिए चेतन की आवश्यकता होती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह जड़ सृष्टि किन्हीं नियमों के आधार पर चल रही है। सूर्य का निश्चित समय पर उदय होना, उसका किसी निश्चित समय पर अस्त होना, ऋतुओं का क्रमशः आगमन, सूर्य-चन्द्र और नक्षत्रों की गति, शरीर-रचना और सृष्टि के सूक्ष्म रहस्य—ये सब इस सत्य की ओर संकेत करते हैं कि सृष्टि का एक-एक कण नियमों में बँधा हुआ है।

जैसे जड़-जगत् नियमों में बँधकर चल रहा है, वैसे ही मनुष्य-समाज के सुचारु रूप से चलने के लिए कुछ नियमों की आवश्यकता होती है। मनुष्य-समाज जिन नियमों के आधार पर चलता है, उन नियमों के संग्रह का नाम धर्म है। नैतिकता के नियमों के बिना मनुष्य-समाज कदापि नहीं चल सकता। नैतिकता के ये नियम ही धर्म कहलाते हैं।

मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताएँ हैं—रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, चिकित्सा और व्यक्तिगत न्याय। जिस प्रकार प्रत्येक मनुष्य को इन छः वस्तुओं की आवश्यकता रहती है, वैसे ही प्रत्येक मनुष्य को नैतिकता-सम्बन्धी नियमों के पालन की आवश्यकता रहती है। नैतिकता के इन नियमों का पालन ही धर्म का आचरण कहलाता है।

जिस प्रकार प्राणों के बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता, जिस प्रकार सूर्य प्रकाश और उष्णता के बिना निरर्थक है, जिस प्रकार चाँदनी के बिना चाँद का कोई महत्त्व नहीं, जिस प्रकार पौष्टिक तत्त्व के बिना अन्न का कोई महत्त्व नहीं, जिस प्रकार उष्णता के बिना अग्नि का कोई अस्तित्व नहीं, जिस प्रकार शीतलता के बिना जल का कोई महत्त्व नहीं, उसी प्रकार धर्म (नैतिक आचरण) के बिना मनुष्य का भी कोई महत्त्व नहीं।

धर्म आचरण की वस्तु है। धर्म केवल प्रवचन और वाद-विवाद का विषय नहीं। केवल तर्क-वितर्क में उलझे रहना धार्मिक होने का लक्षण नहीं है। धार्मिक होने का प्रमाण यही है कि व्यक्ति का धर्म पर कितना आचरण है। व्यक्ति जितना-जितना धर्म पर आचरण करता है, उतना-उतना ही वह धार्मिक बनता है। 'धृ धारणे' से धर्म शब्द बनता है, जिसका अर्थ है धारण करना। महर्षि वेदव्यास ने कहा है—

धारणात् धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः।
यत् स्याद् धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः॥

धारण करने से ही धर्म को धर्म कहते हैं। धर्म प्रजा को धारण करता है। जो धारण करने के गुण से युक्त होता है, निश्चय से वही धर्म है। तैत्तिरीयोपनिषद् के ऋषि के अनुसार शिक्षा-प्राप्ति के उपरान्त गुरुकुल के स्नातक को विदा करते समय जो उपदेश दिये जाते थे, उनमें एक उपदेश यह भी होता था—

धर्मं चर !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अर्थात् तू धर्म का आचरण कर! इसमें धर्म का आचरण करने की बात कही गई है, धर्म पर तर्क-वितर्क और वाद-विवाद करने की बात नहीं कही गई।

मनुष्य एक पशु है। समाज में रहने के कारण वह एक सामाजिक पशु है। विद्या को ग्रहण करके वह बौद्धिक पशु बन जाता है। विद्या की प्राप्ति मनुष्यता का लक्षण नहीं है। जब वह नैतिकता को धारण करता है, तब वह मनुष्य कहलाता है। निर्व्यसनता नैतिकता को चमकाती है। आध्यात्मिकता सोने पर सुहागे का काम करती है। नैतिकता+निर्व्यसनता+आध्यात्मिकता का समन्वय ही वास्तव में मनुष्य को मनुष्य बनाता है।

धर्म मनुष्य में शिवत्व की स्थापना करना चाहता है। वह मनुष्य को पशुता के धरातल से ऊपर उठाकर मानवता की ओर ले जाता है और मानवता से ऊपर उठाकर उसे देवत्व की ओर ले जाता है। यदि कोई व्यक्ति धार्मिक होने का दावा करता है और मनुष्यता और देवत्व उसके जीवन में नहीं आ पाते, तो समझिए कि वह धर्म का आचरण न करके धर्म का केवल आडम्बर कर रहा है।

वैदिक साहित्य में धर्म की बहुत महिमा बताई गई है। मनु महाराज ने लिखा है—

नामुम हि सहायार्थं पितामाता च तिष्ठतः।
न पुत्रदारं न ज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलः॥

—(मनु० ४ : २३९)

परलोक में माता, पिता, पुत्र, पत्नी और गोती (एक ही वंश का) मनुष्य की कोई सहायता नहीं करते। वहाँ पर केवल धर्म ही मनुष्य की सहायता करता है।

एकः प्रजायते जन्तुरेक एव प्रलीयते।
एकोऽनुभुङ्क्ते सुकृतमेक एव च दुष्कृतम्॥

—(मनु० ४ : २४०)

जीव अकेला ही जन्म लेता है और अकेला ही मृत्यु को प्राप्त होता है। अकेला ही पुण्य को भोगता है और अकेला ही पाप को भोगता है।

एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः।
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति॥

—(मनु० ८ : १७)

एक ही मित्र धर्म है जो मरने पर भी आत्मा के पीछे जाता है; अन्य सब पदार्थ शरीर के नष्ट होने के साथ ही नष्ट हो जाते हैं।

मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोष्ठसमं क्षितौ।
विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति॥

—(मनु० ४ : २४१)

सम्बन्धी मृतक के शरीर को लकड़ी और ढेले के समान भूमि पर फैंककर विमुख होकर चले जाते हैं, परन्तु आत्मा के साथ केवल धर्म ही जाता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धर्मप्रधानं पुरुषं तपसा हतकिल्बिषम्।
परलोकं नयत्याशु भास्वन्तं खशरीरिणम्॥

—(मनु० ४ : २४३)

जो पुरुष धर्म ही को प्रधान समझता है, जिसका धर्म के अनुष्ठान से पाप दूर हो गया है, उसको प्रकाशस्वरूप और आकाश जिसका शरीरवत् है उस परम-दर्शनीय परमात्मा को धर्म ही शीघ्र प्राप्त कराता है।

धर्म के आचरण पर मनु महाराज ने बहुत बल दिया है—

अधार्मिको नरो यो हि यस्य चाप्यनृतं धनम्।
हिंसारतश्च यो नित्यं नेहासौ सुखमेधते॥

—(मनु० ४ : १७०)

जो अधर्मी, अनृतभाषी, अपवित्र व अनुचित रीत्योपार्जक तथा हिंसक है, वह इस लोक में सुख नहीं पाता।

न सीदन्नपि धर्मेण मनोऽधर्मे निवेशयेत्।
अधार्मिकाणां पापानामाशु पश्यन्विपर्ययम्॥

—(मनु० ४ : १७१)

धर्माचरण में कष्ट झेलकर भी अधर्म की इच्छा न करे, क्योंकि अधार्मिकों की धन-सम्पत्ति शीघ्र ही नष्ट होती देखी जाती है।

नाधर्मश्चरितो लोके सद्यः फलति गौरिव।
शनैरावर्तमानस्तु कर्तुर्मूलानि कृन्तति॥

—(मनु० ४ : १७२)

संसार में अधर्म शीघ्र ही फल नहीं देता, जैसे पृथिवी बीज बोने पर तुरन्त फल नहीं देती। वह अधर्म धीरे-धीरे कर्त्ता की जड़ों तक को काट देता है।

अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नाञ्जयति समूलस्तु विनश्यति॥

—(मनु० ४ : १७४)

अधर्मी प्रथम तो अधर्म के कारण उन्नत होता है और कल्याण-ही-कल्याण पाता है, तदनन्तर शत्रु विजयी होता है और समूल नष्ट हो जाता है।

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्॥

—(मनु० ८ : १५)

मारा हुआ धर्म मनुष्य का नाश करता है और रक्षा किया हुआ धर्म मनुष्य की रक्षा करता है। इसलिए धर्म का नाश नहीं करना चाहिए ताकि कहीं मरा हुआ धर्म तुम्हें ही न मार दे!

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वृषो हि भगवान् धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम्।
वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद्धर्मं न लोपयेत्॥

—(मनु० ८ : १६)

ऐश्वर्यवान् धर्म सुखों की वर्षा करनेवाला होता है। जो कोई उसका लोप करता है, देव उसको नीच कहते हैं, इसलिए मनुष्य को धर्म का लोप नहीं करना चाहिए।

चला लक्ष्मीश्चला प्राणाश्चलं जीवितयौवनम्।
चलाचले हि संसारे धर्म एको हि निश्चलः॥

धन, प्राण, जीवन और यौवन—ये सब चलायमान हैं। इस चलायमान संसार में केवल एक धर्म ही निश्चल है।

प्रश्न यह उठता है कि जिस धर्म की इतनी महिमा कही गई है, वह धर्म क्या है? इस सन्दर्भ में मनु महाराज का श्लोक ध्यान देने योग्य है—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

—(मनु० ६ : ९२)

धीरज, हानि पहुँचानेवाले से प्रतिकार न लेना, मन को विषयों से रोकना, चोरी न करना, मन को राग-द्वेष से परे रखना, इन्द्रियों को बुरे कामों से बचाना, मादक द्रव्य का सेवन न करके बुद्धि को पवित्र रखना, ज्ञान की प्राप्ति, सत्य बोलना और क्रोध न करना—ये धर्म के दस लक्षण हैं।

मनु महाराज ने धर्म के दस लक्षण बताकर नैतिकता की कुछ बातें बताई हैं। ये दस लक्षण नैतिकता की ओर संकेत करते हैं। इन दस लक्षणों के अतिरिक्त लोभ का त्याग, मोह का वशीकार, अहंकार की निवृत्ति, नम्रता, सरलता (निष्कपटता), दोष की स्वीकृति, क्षमा-याचना, छोटों के प्रति स्नेह-भाव, बड़ों के प्रति श्रद्धा-भाव, स्वार्थ-त्याग, परोपकार, मानवमात्र से प्रेम, ईर्ष्या की निवृत्ति, द्वेष का अभाव, अहिंसा, अन्याय का विरोध, कृतज्ञता, कर्त्तव्य-निष्ठा, ईश्वरार्पण-भाव, गुण-ग्राहकता, सेवा-भाव, माता-पिता-आचार्य और अतिथि की सेवा, दानशीलता, प्रतिकार-भावना का अभाव, रुष्ट व्यक्ति का रोष-निवारण और वाक्-संयम इत्यादि नैतिकता के सभी गुण धर्म के अन्तर्गत आते हैं। व्यक्ति जितना-जितना इन नियमों को अपनाता है, उतना-उतना ही धार्मिक बनता जाता है।

इन्हीं गुणों को महर्षि दयानन्द जी ने तीर्थ कहकर पुकारा है, क्योंकि **'जना यैस्तरन्ति तानि तीर्थानि'** अर्थात् मनुष्य जिनके कारण तरे, उनका नाम तीर्थ है। जलस्थल तरानेवाले नहीं, किन्तु डुबाकर मारनेवाले हैं।

धर्म की एक सार्वभौम परिभाषा महर्षि वेदव्यास ने महाभारत में दी है। वह इस प्रकार है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं, श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि, परेषां न समाचरेत्॥

धर्म के सर्वस्व (मर्म) को सुनो और सुनकर धारण करो। जो व्यवहार अपने प्रतिकूल हो, वह दूसरों के लिए मत करो!

धर्म की जो परिभाषाएँ भारतीय ऋषियों ने दी हैं, उनसे संसार के किसी भी बुद्धिमान् को विरोध नहीं हो सकता। संसार का कोई भी व्यक्ति चाहे किसी सम्प्रदाय का हो और किसी भी देश का हो, उसे नैतिकता के इन नियमों से कभी इन्कार नहीं हो सकता। यह नैतिकता ही सार्वभौम, सार्वदेशिक, सार्वकालिक और सार्वत्रिक धर्म है। इसी धर्म के सहारे मनुष्य-समाज चल रहा है। इन नियमों का पालन किये बिना मनुष्य-समाज नहीं चल सकता। इन नियमों के पालन न करने से ही मनुष्य-जगत् में विकार आते हैं। यदि ये नियम सुन्दर रीति से चलते रहते हैं, तो मानव-समाज में शान्ति, आनन्द और सद्भाव का निवास होता है। जहाँ ये नियम काम नहीं करते वहाँ दुःख, कलह और क्लेश का वातावरण बना रहता है।

नैतिकता के ये नियम सभी मत-मतान्तरों को स्वीकार हैं। साम्यवादी (कम्युनिस्ट) जो संस्थाबद्ध मतों के घोर विरोधी हैं, उनको भी इन नियमों से कोई विरोध नहीं, क्योंकि नैतिकता ही मानव-धर्म है। जैसे मनुष्य को (१) रोटी, (२) कपड़ा, (३) मकान, (४) चिकित्सा, (५) शिक्षा और (६) न्याय की आवश्यकता रहती है, वैसे ही मनुष्य को इस नैतिकतारूपी धर्म की आवश्यकता रहती है। जिस प्रकार मनुष्य उपर्युक्त मूलभूत आवश्यकताओं के बिना जीवन-निर्वाह नहीं कर सकता, वैसे ही नैतिकता को अपनाए बिना वह जीवन व्यतीत नहीं कर सकता।

धर्म का सार कोरी नैतिकता ही नहीं है। धर्म के साथ आध्यात्मिकता का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। केवल नैतिकता का आचरण व्यक्ति की एकांगी उन्नति का कारण है। जब ईश्वरोपासना साथ जुड़ती है, तब मनुष्य के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास होता है। ईश्वरोपासना के ढंग भिन्न-भिन्न हैं, परन्तु ऋषियों द्वारा निर्दिष्ट पद्धति योगाभ्यास है जिसमें भाषा का कोई भेद नहीं। चित्तवृत्तियों को एकाग्र करते हुए आत्मा और परमात्मा का प्रत्यक्षीकरण करने का मार्ग ही एक निर्विवाद मार्ग है, जिसपर सारे संसार के मनुष्यों को एक केन्द्र-बिन्दु पर इकट्ठा किया जा सकता है। नैतिकता और योग-निष्ठा—यही दो केन्द्र-बिन्दु हैं जहाँ पर संसार के मनुष्यों को केन्द्रित किया जा सकता है।

प्रत्येक मत के चार पक्ष होते हैं—दार्शनिक, कर्मकाण्ड, नैतिकता एवं निर्व्यसनता, और उपासना-पद्धति। नैतिकता प्रत्येक मत को स्वीकार है। इसका अर्थ यह हुआ कि नैतिकता सारे मतों का सामान्य कारक है। इस सामान्य कारक से साम्यवादी (कम्युनिस्ट) को भी इन्कार नहीं है। जिसने नैतिकता को स्वीकार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर लिया, मानो उसने धर्म की अन्तरात्मा के आगे सिर झुका दिया, भले ही वह संस्थावद्ध मत हिन्दू मत, इस्लाम, ईसाई मत, यहूदी मत, बौद्ध मत पर विश्वास न रखता हो। यही वह केन्द्रविन्दु है जिसपर धरती के सभी मनुष्य खड़े किये जा सकते हैं। यही वह केन्द्रविन्दु है जिसपर सभी मत-मतान्तर एक धरातल पर लाए जा सकते हैं। ऊपर जो प्रत्येक मत के चार पक्ष गिनाए गए हैं, उनमें दार्शनिक दृष्टि, कर्मकाण्डपरकता और निर्व्यसनता पर भी विवाद है एवं उपासना-पद्धति के भी अनेक ढंग हैं, परन्तु नैतिकता पर कोई विवाद नहीं है। यह नैतिकता ही धर्म की अन्तरात्मा है, यही सब मत-मतान्तरों का सार है, यही सार्वभौम धर्म है।

'सत्यार्थप्रकाश' के ग्यारहवें समुल्लास के अन्त में महर्षि दयानन्द ने आप्त विद्वान् और जिज्ञासु में एक वार्तालाप उपस्थित किया है। आप्त विद्वान् ने जिज्ञासु को परामर्श दिया कि वह इन-इन मत-मतान्तरवालों के पास जाए और उनसे पूछे। वे जिन बातों पर सहमत हों वह धर्म, और जिन बातों पर वे सहमत न हों वह अधर्म। वह जिज्ञासु इन मत-मतान्तरवालों के पास जाता है और उनसे पूछता है—'सत्य भाषण में धर्म है वा मिथ्या में?' सब एकस्वर होकर बोले कि 'सत्य भाषण में धर्म और असत्य भाषण में अधर्म है।' वैसे ही विद्या पढ़ने, ब्रह्मचर्य करने, पूर्ण युवावस्था में विवाह, सत्संग, पुरुषार्थ, सत्य व्यवहार आदि में धर्म और अविद्या-ग्रहण, ब्रह्मचर्य न करने, व्यभिचार करने, कुसंग, आलस्य, असत्य व्यवहार, छल, कपट, हिंसा, पर-हानि करने आदि कर्मों में? सबने एकमत होके कहा कि विद्यादि ग्रहण में धर्म और अविद्यादि के ग्रहण में अधर्म।

उक्त वार्तालाप से यह सिद्ध होता है कि जिज्ञासु के प्रश्न पर मत-मतान्तर-वालों ने जिन बातों पर सहमति प्रकट की है, वे सब बातें नैतिकता से सम्बन्धित हैं। यही नैतिकता ही मानव-धर्म है।

यही वे कर्म हैं जिनके लिए वेद-मन्त्र ने कहा है कि देव श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा परमेश्वर का पूजन करते हैं और यही कर्म अनादि रूप से मुख्य हैं। नैतिकता के यही नियम ईश्वर की भक्ति के प्रमुख साधन हैं। यही कर्म मुख्य हैं और अनादि रूप से मुख्य हैं। जीवात्माओं के साथ नैतिकता के इन नियमों का शाश्वत सम्बन्ध है। इन्हीं के कारण विद्वान् महत्त्व से युक्त होते हैं और मोक्ष को प्राप्त होते हैं—

तस्माद्धर्मं सहायार्थं नित्यं संचिनुयाच्छनैः।
धर्मेण हि सहायेन तमस्तरति दुस्तरम्॥

—(मनु० ४: २४५)

अतः मनुष्य को अपनी सहायता के लिए धर्म का सदा संचय करना चाहिए, क्योंकि धर्म की ही सहायता से मनुष्य दुस्तर दुःख-सागर को तर सकता है।

इस प्रसंग में एक छोटी-सी कथा का वर्णन करना अप्रासंगिक नहीं होगा। यह कथा इस प्रसंग को समझने में सहायक सिद्ध होगी। एक बहुत बड़े विद्वान् के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन की घटना है। एक बार उसे नौका-विहार की इच्छा हुई। वह नदी के किनारे गया। उसने एक नाविक से प्रार्थना की कि वह उसे नौका-विहार कराए। नाविक उसे नौका में बिठाकर नौका-विहार कराने लगा। शीतल और मन्द समीर के झोंके चल रहे थे। विद्वान् आनन्द-मग्न था। उसने मस्ती में भरकर नाविक से पूछा—'क्या तुमने दर्शन-शास्त्र पढ़ा है ?' नाविक ने कहा—'नहीं। मैं भला दर्शन-शास्त्र को क्या जानूं ? मैं एक अनपढ़ निर्धन मल्लाह हूँ। नौका चलाकर रोटी कमाता हूँ।' विद्वान् ने व्यंग्यात्मक दृष्टि से कहा—'निश्चय जान कि तेरी आयु का $\frac{1}{4}$ भाग व्यर्थ गया।' नौका नदी की अथाह जल-राशि में बह रही थी। कुछ समय के पश्चात् विद्वान् ने फिर मल्लाह से पूछा—'क्या तुमने राजनीति-शास्त्र पढ़ा ?' नाविक ने उत्तर दिया—'मैंने तो राजनीति-शास्त्र नहीं पढ़ा।' विद्वान् ने कहा—'निश्चय जान, तेरी आयु का $\frac{2}{4}$ भाग व्यर्थ गया।' कुछ समय के पश्चात् फिर विद्वान् ने पूछा—'तूने अर्थ-शास्त्र पढ़ा है ?' नाविक बोला—'मैंने तो अर्थ-शास्त्र नहीं पढ़ा।' विद्वान् ने उसका उपहास उड़ाते हुए कहा—'निश्चय जान, तेरी आयु का $\frac{3}{4}$ भाग व्यर्थ गया।' दैव-योग से कुछ ही क्षणों में नदी का पानी बढ़ने लगा और नाव हिचकोले खाने लगी। नाविक ने बहुत हाथ-पैर मारे, परन्तु नाव नियन्त्रण से बाहर हो गई। ऐसी स्थिति में नाविक ने विद्वान् से पूछा—'क्यों श्रीमन् ! नदी में तैरने की कला जानते हो ?' विद्वान् ने कहा—'मैं तो इस कला को नहीं जानता।' इसपर नाविक ने कहा—'मेरी तो $\frac{3}{4}$ भाग आयु ही व्यर्थ गई, मगर समझ लो कि आपकी सारी आयु ही व्यर्थ गई, क्योंकि तैरना आपको आता नहीं और कोरे शास्त्रों का ज्ञान आपको डूबने से बचा नहीं सकता।'

इसी प्रकार भव-सागर को पार करने की कला है—धर्म का आचरण। जो पूर्वोक्त नैतिकता के नियमों पर आचरण करेगा, वह निश्चित रूप से भव-सागर को पार कर जाएगा।

पर बात केवल नैतिकता तक ही सीमित नहीं रह जाती, बात इससे आगे भी चलती है। जब मनुष्य रोटी, कपड़ा और मकान की समस्याओं से निश्चिन्तता प्राप्त करता है तो वह सोचता है कि इस संसार का बनानेवाला कौन है ? क्या यह संसार अपने-आप बना है अथवा इसका कोई बनानेवाला है ? यदि बनानेवाला है तो वह एक है अथवा दो ? यदि वह है तो उसका क्या स्वरूप है ? वह निराकार है अथवा साकार रूप भी धारण करता है ? वह सर्वशक्तिमान् है तो किस रूप में ? वह न्यायकारी है तो दयालु किस रूप में ? क्या इस संसार का कोई धारक है अथवा नहीं ? क्या इस सृष्टि का कोई संहारक है अथवा नहीं ? क्या कोई हमारे कर्मों का द्रष्टा है कि नहीं ? क्या हमारे कर्मों का कोई फल-प्रदाता है कि नहीं ? यदि वह है तो उसने मनुष्यमात्र को कोई सन्देश-उपदेश दिया है कि नहीं ? यदि दिया है तो वर्तमान धर्म-ग्रन्थों में से वह कौन-सा धर्म-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ग्रन्थ है ? क्या शरीर में किसी आत्म-तत्त्व का निवास है कि नहीं ? शरीर में वर्तमान चेतना क्या स्थूल भूतों का परिणाम है अथवा आत्म-तत्त्वों के कारण है ? यदि आत्म-तत्त्व है तो उसका क्या स्वरूप है ? क्या आत्मा कर्मफल को प्राप्त करता है ? क्या वर्तमान जन्म से पहले और मृत्यु के पश्चात् कोई जीवन है कि नहीं ? क्या स्वर्ग, नरक अथवा मोक्ष नाम की कोई वस्तु है कि नहीं ?

ये वे प्रश्न हैं जिनको लेकर किसी भी मत-मतान्तर का दार्शनिक पक्ष बनता है। यह दार्शनिक पक्ष बहुत विवादग्रस्त है। संसार के मत-मतान्तर इन प्रश्नों का एक-जैसा उत्तर नहीं देते। वे इन प्रश्नों के भिन्न-भिन्न उत्तर देते हैं। कोई भी जिज्ञासु इन उत्तरों को सुनकर चकित हो जाता है। वह निश्चय ही नहीं कर पाता कि किसे स्वीकार किया जाए अथवा और किसे अस्वीकार। यह दार्शनिक पक्ष विवादग्रस्त पक्ष है।

दार्शनिक पक्ष के पश्चात् आता है संस्कार-पक्ष। वैदिक ऋषियों ने मनुष्य-जीवन के परिष्कार के लिए सोलह संस्कारों का विधान किया है। ये संस्कार किसी भी मत-मतान्तर के यहाँ नहीं पाए जाते। सोलह संस्कारों की बात छोड़िए, दो मुख्य संस्कारों को लीजिए—विवाह-संस्कार और अन्त्येष्टि-संस्कार। विवाह किस रीति से हो अथवा मरने के पश्चात् पार्थिव अवशेष का क्या बने ? ये दो संस्कार ही बहुत विवादग्रस्त हैं। कोई कहता है कि मृतक शरीर को भूमि में गाड़ना चाहिए, कोई कहता है जलाना चाहिए तो कोई कहता है उसे जंगली पशुओं के आगे डालना चाहिए। सभी मत-मतान्तरों के संस्कार-पक्ष में मतभेद है।

मत-मतान्तरों का एक पक्ष निर्व्यसनता भी है। कुछ मत मांसाहार को वैध समझते हैं तो कुछ उसको अवैध। इसपर भी मतभेद है।

अब रहा उपासना-पद्धति का पक्ष। एक मत कहता है कि नमाज द्वारा ईश्वर की भक्ति करनी चाहिए। दूसरा कहता है कि प्रार्थना (प्रेयर) द्वारा। तीसरा कहता है कि सन्ध्योपासना और योगाभ्यास द्वारा भक्ति करनी चाहिए। यह उपासना-पद्धति का पक्ष भी बहुत विवादग्रस्त है।

प्रश्न यह है कि इतनी विवादग्रस्तता में वह कौन-सा केन्द्रबिन्दु है कि जिस पर सब मत-मतान्तरों को इकट्ठा किया जा सके? निश्चित रूप से दार्शनिक-पक्ष, संस्कार-पक्ष, निर्व्यसनता और उपासना-पद्धति में कोई भी ऐसा केन्द्र-बिन्दु नहीं है जिसपर इन सब मतों को इकट्ठा किया जा सके। जबतक मनुष्य के कन्धों पर सिर रहेगा, सिर में मस्तिष्क रहेगा और मस्तिष्क में चिन्तन-शक्ति रहेगी, तब तक यह विभिन्नता और मत-भेद समाप्त नहीं हो सकते।

हाँ, एक बात का कहना आवश्यक प्रतीत होता है। वह यह कि यदि सब मत-मतान्तरों के दार्शनिक पक्ष, संस्कार-पक्ष, निर्व्यसनता और उपासना-पद्धति की तुलना की जाय और निष्पक्ष विवेचन किया जाय तो व्यक्ति वैदिक धर्म के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दार्शनिक पक्ष, संस्कार-पक्ष, निर्व्यसनता और उपासना-पद्धति को ही श्रेष्ठतम समझेगा। धर्म के जिज्ञासुओं के लिए यह खुला निमन्त्रण है कि वे सब मतों की तुलना करें और परिणाम पर पहुँचें। विस्तार-भय से इस तुलना का यहाँ पर अवकाश नहीं है।

जैसाकि ऊपर कहा गया है, धर्म का लक्ष्य मनुष्य का नैतिक और आध्यात्मिक उत्थान है। धर्म बहुत ऊँची वस्तु है, परन्तु धर्म का संसार में बहुत अपयश फैला है। इस अपयश के कई कारण हैं। 'साम्प्रदायिकता' धर्म के अपयश का एक बहुत बड़ा कारण है। मत-मतान्तरों के विद्वानों का सैद्धान्तिक विवेचन करते हुए दूसरों के सिद्धान्तों का खण्डन-मण्डन तो किसी सीमा तक उचित है, परन्तु एकमतस्थ विद्वानों का दूसरों के प्रति घृणा का प्रसार करना धर्म का आचरण नहीं, अपितु साम्प्रदायिकता को अपनाना है। क्या धर्म दूसरों के प्रति घृणा करना सिखाता है?—कदापि नहीं। धर्म तो प्रेम और सौहार्द का उपदेश देता है। धर्म तो मानव को मानव के साथ जोड़ता है, भेद-भाव उत्पन्न नहीं करता। वर्ण-व्यवस्था के विकृत रूप को अपनाकर सवर्ण हिन्दुओं ने शूद्रों पर जो अत्याचार किए हैं, वे भी अधर्म के कारण ही किए हैं। धर्म ऐसे सामाजिक अन्याय की आज्ञा नहीं देता। दूसरों को काफ़िर और दुष्ट कहकर उनकी हत्या या मार-पीट का विधान करना साम्प्रदायिकता का ही एक दूषित और कलुषित रूप है। जब धर्म मनुष्य को मनुष्य से घृणा करना ही नहीं सिखाता तो वह दूसरे मनुष्यों की हत्या का विधान कैसे करेगा? इसी साम्प्रदायिकता की आड़ लेकर एक सम्प्रदाय के लोग दूसरे सम्प्रदाय की हत्या करते हैं। इसी साम्प्रदायिकता के कारण शिया और सुन्नी, रोमन कैथोलिक और प्रोटैस्टैण्ट आपस में लड़ते हैं और एक-दूसरे की हत्या करते हैं। ऐसी स्थिति में साम्प्रदायिकता की आड़ में धर्म बदनाम होता है। इसी साम्प्रदायिकता ने ही धर्म के उज्ज्वल स्वरूप को कलंकित किया है। इसी प्रकार एक सम्प्रदायवाले दूसरे सम्प्रदायवाले की सम्पत्ति को लूटते हैं। दूसरे मतवालों की सम्पत्ति की लूट-पाट भी धर्म की दृष्टि से चोरी और डाका ही है। क्या धर्म चोरी और डाके का समर्थन कर सकता है? और यदि कोई धर्म चोरी-डाके का का समर्थन करता है तो वह धर्म नहीं है।

एक मतवाले दूसरे मतवालों की लड़कियों के साथ व्यभिचार करते हैं और इसे भी पुण्य समझते हैं। क्या यह धर्म है? यदि यह धर्म है तो अधर्म क्या है? धर्म के नाम पर यह भी एक कलंक है।

अपने मत के सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए एक मत के अनुयायी दूसरे मतवालों को तलवार के बल से अपने सम्प्रदाय में प्रवेश कराते हैं। इस अत्याचार का भी धर्म के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। इसके पीछे भी साम्प्रदायिक दल-विस्तार की भावना ही काम करती है। मुसलमानों ने सम्प्रदाय-परिवर्तन के लिए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पारसियों और हिन्दुओं पर जो अत्याचार किए हैं, वे इस्लाम के नाम पर बहुत बड़ा धब्बा हैं।

जब कोई मत-प्रवर्त्तक संसार में आता है तो उसके सम्पर्क में जो व्यक्ति आते हैं वे उसके गुणों से प्रभावित होकर अपने आचरण को बदलते हैं, अपना नैतिक उत्थान करते हैं, अपनी बुराइयों को मोड़कर अच्छाइयों को स्वीकार करते हैं। उनका यही आचरण मानो धर्म को अपनाना है। इन व्यक्तियों की सन्तान का आचरण उन-जैसा नहीं होता, क्योंकि उन्होंने (कुछ को छोड़कर) तो उस महा-पुरुष के सम्पर्क में आकर अपने आचरण को बदला नहीं होता, अतः वे एक दल का रूप धारण कर लेते हैं। फिर उन सम्प्रदायवालों की यह इच्छा होती है कि उनके सिद्धान्तों के माननेवालों की संख्या बढ़े। इसके लिए वे लोभ और भय का आश्रय लेकर लोगों को अपने सम्प्रदाय में दीक्षित करते हैं। इस प्रक्रिया के अपनाने से धर्म की अन्तरात्मा समाप्त हो जाती है और केवल दल-विस्तार की भावना रह जाती है। यह प्रवृत्ति गुणवत्ता को कम कर देती है और संख्या-वृद्धि को प्रोत्साहन देती है। इसी के कारण धर्म की अन्तरात्मा को बहुत हानि पहुँचती है और धर्म केवल ढोल की पोल बनकर रह जाता है। इस दल-विस्तार की प्रवृत्ति के कारण धर्म बदनाम हुआ, यद्यपि इसमें धर्म का कोई दोष नहीं, दोष तो दल-विस्तार की भावना में है।

धार्मिक होने की घोषणा करना और धर्म के अनुरूप आचरण न करना भी धर्म की बदनामी का कारण बना है। केवल दार्शनिक सिद्धान्तों की रट लगाए जाना, केवल संस्कार-पक्ष की व्याख्या करते जाना और व्यवहार एवं आचरण को न सुधारना—यह मानो धर्म को बदनाम करना है। एक व्यक्ति नमाज़, प्रार्थना (प्रेयर), यज्ञ और पूजा-पाठ तो मन लगाकर करता है, परन्तु दुकान पर बैठकर कम तोलता है, झूठ बोलता है, दूसरों के साथ छल-कपट करता है तो वह धर्म को बदनाम कर रहा है, क्योंकि उसका आचरण धर्म के अनुकूल नहीं। इसी सन्दर्भ में उर्दू के एक कवि ने कहा है—

खुदा के बन्दों को देखकर ही खुदा से मुन्किर हुई है दुनिया।
कि जिस खुदा के हैं ऐसे बन्दे, वो कोई अच्छा खुदा नहीं है॥

यदि कोई व्यक्ति धार्मिक होने का ढोंग रचता है और धर्म का आचरण नहीं करता, तो यह उसका अपना दोष है, धर्म का तो कोई दोष नहीं।

धर्म की बदनामी का एक कारण **पौराणिकता** भी है। प्रत्येक मत में कई ऊलजलूल, तर्कहीन, बुद्धि-शून्य, सृष्टि-विज्ञान के विरुद्ध ऐसी कथाएँ जोड़ी हुई हैं जिनका धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। धर्म का एक लक्षण 'ज्ञान' बताया गया है, जबकि ये सब कहानियाँ बुद्धि और ज्ञान के विपरीत हैं। कर्ण का कानों से उत्पन्न होना, हनुमान जी का सूरज को मुँह में डाल लेना, गंगा का शिवजी की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जटाओं से निकलना, गुरु नानकदेव का मक्के को घुमा देना, मूसा के डंडे का बहुत बड़ा साँप बन जाना, उनके डंडे से नील नदी का सूख जाना, तूर पहाड़ पर जाकर उनका ईश्वर से बातें करना, इब्राहीम का नमरूद की आग में कूदना और उस आग का बाग़ बन जाना, ईसा का बिना बाप के उत्पन्न होना, ईसा का मुर्दों को जीवित कर देना, मुहम्मद का चाँद के दो टुकड़े कर देना, महावीर स्वामी का अँगूठे को दबाना और शेषनाग का हिल जाना, महावीर का साँप को काटना और महावीर के शरीर से दूध का निकलना और सर्प का स्वर्ग में जाना इत्यादि-इत्यादि कई बुद्धि और तर्क से रहित घटनाएँ सभी मत-मतान्तरों में पाई जाती हैं। ज्यों-ज्यों विज्ञान और बुद्धिवाद का प्रकाश हो रहा है त्यों-त्यों बुद्धिवादी को धर्म उपहास की वस्तु प्रतीत होने लगा है। परन्तु इसमें धर्म का कोई दोष नहीं। ऐसी स्थिति में अज्ञान और अविद्या के नाम पर ही धर्म को बदनाम होना पड़ा है।

स्वार्थपूर्ति के कारण भी धर्म बदनाम हुआ। स्पेन और पुर्तगाल के लोग दक्षिणी अमेरिका की जंगली जातियों पर शासन करना चाहते थे। वे इसका कोई उपाय सोचने लगे। उन्होंने उनके मुखिया को बाइबल देकर कहा कि इसकी आज्ञा पर चलो। मुखिया ने पुस्तक को कान से लगाकर कहा कि यह तो कुछ भी नहीं कहती और उसे नीचे फेंक दिया। बस, उन लोगों को बहाना मिल गया और वे जंगली जातियों पर अत्याचार करने लगे। औरंगज़ेब ने भी दारा शिकोह को मारने के लिए यह बहाना बनाया कि दारा इस्लाम का शत्रु है। इस प्रकार स्वार्थ की पूर्ति के कारण धर्म बदनाम हो गया।

ईसाई पादरियों ने यूरोप में धर्म के नाम पर लोगों का बहुत शोषण किया। लोगों से रुपये लेकर उन्हें अभिशंसात्मक पत्र देने लगे, ताकि न्याय के दिन ये पत्र उनकी मुक्ति के काम आएँ। धर्म के नाम पर जो शोषण किया जाता रहा, इसका विरोध मार्टिन लूथर और तदनन्तर साम्यवादियों ने किया। इस ठगी के कारण धर्म बदनाम हुआ, वस्तुतः इसमें धर्म का कोई भी दोष नहीं था, धर्म तो वैसे ही बदनाम हो गया।

धर्म के नाम पर ही भारत में शूद्रों पर घोर अत्याचार किये गए। उन्हें सामाजिक और धार्मिक न्याय से वंचित रक्खा गया। वर्ण-व्यवस्था की रचना तो आजीविका-भेद के कारण की गई थी, परन्तु उसका दुरुपयोग यह हुआ कि शूद्रों से ही घृणा की जाने लगी। यह धर्म का दुरुपयोग था। धर्म तो वास्तव में मनुष्यों से प्रेम करना सिखाता है, न कि घृणा। स्त्रियों को अपने से निकृष्ट और अपवित्र समझा गया। स्त्री से ही जन्म पानेवाले पुरुष ने अपने को तो पवित्र समझा, परन्तु स्त्री को अपवित्र, यह कैसी विडम्बना है! ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए यज्ञ में पशुओं की आहुतियाँ दी जाती रहीं। भला हत्या का धर्म से क्या सम्बन्ध? ये सब

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
कार्य धर्म के ही नाम पर होते रहे और धर्म वैसे ही बदनाम होता रहा।

उपर्युक्त विवेचन से यह सिद्ध होता है कि कारण तो कुछ और ही थे, परन्तु धर्म वैसे ही बदनाम होता रहा। इसी सन्दर्भ में एक आख्यायिका का यहाँ देना अप्रासंगिक न होगा। एक व्यक्ति के पास एक बन्दर और एक कटड़ा थे। वह व्यक्ति प्रातःकाल को दोपहर का भोजन तैयार करके कमरे में रख जाता, दरवाजे की साँकल लगा जाता। स्वामी के चले जाने के पश्चात् बन्दर साँकल को खोल लेता और मालिक का भोजन खा जाता और अपना पंजा कटड़े के मुँह पर मल देता। मालिक जब आता तो उसका खाना उसे नहीं मिलता था। मालिक देखता कि कटड़े के मुँह पर दाल या सब्जी मली हुई होती थी। मालिक को कटड़े पर बहुत क्रोध आता और वह उसकी पिटाई कर देता। दो-तीन दिन तक ऐसे ही होता रहा। एक दिन मालिक ने सोचा कि मैं तो दरवाजा बन्द करके जाता हूँ, कटड़ा इसे कैसे खोल सकता है? हो न हो, यह बन्दर की ही शरारत है। ठीक यही दशा धर्म की भी हुई। साम्प्रदायिकता, भ्रष्ट आचरण, पौराणिकता और स्वार्थसिद्धि आदि के कारण बदनामी धर्म की ही होती रही।

धर्म पर बुद्धिजीवियों की ओर से कई आक्षेप किये गए हैं। उनका एक आक्षेप यह है कि धर्म भाग्यवाद को प्रोत्साहित करता है। व्यक्ति भाग्य का आश्रय लेकर अपनी वर्तमान स्थिति में सन्तुष्ट रहता है और आर्थिक परिवर्तन अथवा क्रान्ति पर उतारू नहीं होता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि संसार का प्रत्येक मत-मतान्तर भाग्य में विश्वास रखता है, जबकि उन मत-मतान्तरों को तो भाग्य में विश्वास रखना ही नहीं चाहिए जो आवागमन को नहीं मानते। भाग्य तो जीव के अपने कर्मों का फल होता है। जब जीवों के पूर्व-जन्म ही नहीं तो पूर्व-कर्म कहाँ हुए? जब पूर्व-जन्मों के कर्म ही नहीं तो भाग्य कहाँ से आया? ऐसे मत-मतान्तरों में भाग्य तो ईश्वर की ओर से होता है। ईश्वर किसी को मूर्ख, किसी को विद्वान्, किसी को निर्धन और किसी को धनवान् बनाता है तो क्यों? वैदिक धर्म में भी भाग्य को माना गया है, परन्तु भाग्य से बड़ा पुरुषार्थ माना गया है। पिछले कर्मों का फल ही भाग्य है और वर्तमान कर्म और पुरुषार्थ ही भावी भाग्य के निर्माता हैं। वैदिक धर्म पुरुषार्थ का विरोधी नहीं है। भाग्य के सहारे रहकर पुरुषार्थ न करना वैदिक धर्म को मान्य नहीं है। भाग्य को मानने का यह अर्थ नहीं है कि हम आर्थिक उन्नति ही न करें। हाँ, आर्थिक क्रान्ति के नाम पर धनवानों का वध किया जाए, वैदिक धर्म इसकी स्वीकृति नहीं देता।

धर्म पर यह भी आक्षेप किया जाता है कि यह वैयक्तिक साधना पर अधिक बल देता है और सामाजिक भावना को हतोत्साहित करता है। इस आक्षेप में भी सचाई नहीं है। धर्म में जो परोपकार पर बल दिया गया है, वह सामाजिकता का ही पोषक है। धर्म यह कदापि नहीं कहता कि हम केवल अपनी ही उन्नति करें,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दूसरों की उन्नति की ओर कोई ध्यान ही न दें।

धर्म पर एक यह आक्षेप भी किया जाता है कि धर्म आस्था की वस्तु है, तर्क की वस्तु नहीं। यह बात इस्लाम और ईसाइयत पर भले ही लागू हो, परन्तु धर्म पर लागू नहीं होती। वैदिक धर्म में तर्क को ऋषि कहा गया है।

धर्म पर यह आरोप लगाया जाता है कि वह स्वर्ग-प्राप्ति की ओर व्यक्ति को अधिक उत्साहित करता है, परन्तु यह आक्षेप ठीक नहीं है। वैदिक धर्म में इहलोक और परलोक दोनों की उन्नति का नाम धर्म कहा गया है। वैशेषिक शास्त्र के अनुसार—

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।

—(वैशे० दर्शन १ : २)

'जिससे मनुष्य के इहलोक और परलोक दोनों की उन्नति हो, वही धर्म है।' इस सूत्र के अनुसार वर्तमान जन्म की उन्नति और परलोक अर्थात् दूसरे जन्म के लिए शुभ कर्मों का संचय—ये दोनों ही धर्म के अन्तर्गत आते हैं। वैदिक धर्म यह नहीं कहता कि तुम केवल इस लोक की उन्नति करो और परजन्म के लिए पुण्य-कर्म न करो, अथवा परलोक के साधन ही जुटाते रहो और इस लोक की उन्नति न करो।

धर्म पर पलायनवाद का भी आक्षेप लगाया जाता है कि यह मनुष्य को सांसारिक समस्याओं से भागने की प्रेरणा देता है, परन्तु बात ऐसी नहीं है। धर्म तो कर्मशीलता का उपदेश देता है। कुछ जन्मजात वैराग्यवान् व्यक्तियों को छोड़कर अन्य सभी व्यक्ति सांसारिक कार्यों में प्रवृत्त होते देखे जाते हैं। वेद ने तो सौ वर्ष तक कर्म करते हुए जीने की प्रेरणा दी है। गीता विशेष रूप से कर्मयोग की व्याख्या करती है। इसलिए वैदिक धर्म में कर्म की उपेक्षा नहीं की गई। वैदिक धर्म मनुष्य को संसार से भागने की बात नहीं कहता, वह तो मनुष्य को संसार में रहकर संसार के पदार्थों को त्याग-भाव से भोगने की प्रेरणा देता है। वैदिक धर्म केवल निवृत्ति का पाठ ही नहीं पढ़ाता, अपितु प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों का समन्वय कराता है।

कुछ विद्वान् विज्ञान और धर्म को परस्पर-विरोधी बताते हैं। वे कहते हैं कि वैज्ञानिक धर्म की कोई आवश्यकता नहीं। अब विज्ञान ने धर्म का स्थान ले लिया है। परन्तु यह मिथ्या धारणा है। विज्ञान और धर्म के विभिन्न क्षेत्र हैं। विज्ञान का क्षेत्र है—विभिन्न पदार्थों की खोज। विज्ञान का मुख्य सम्बन्ध चार विषयों से है—भौतिकी, रसायन, वनस्पति शास्त्र और प्राणि-विज्ञान। भौतिकी का सम्बन्ध है भौतिक पदार्थों की छानबीन से। रसायन का सम्बन्ध है पदार्थों के सम्मिश्रण और नई वस्तुओं के निर्माण से। वनस्पति-शास्त्र वनस्पतियों की खोज करता है। प्राणि-विज्ञान प्राणियों के शरीरों की छानबीन करता है। इनके विपरीत धर्म का

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

क्षेत्र सर्वथा भिन्न है। धर्म स्वयं में सबसे महान् विज्ञान है। धर्म का सम्बन्ध विशेष रूप से आत्मा और परमात्मा की जानकारी एवं उनके प्रत्यक्षीकरण से है। वस्तुतः धर्म का विज्ञान सर्वांगी है और भौतिक विज्ञान एकांगी। विज्ञान और धर्म के क्षेत्र अलग दिखाई देने पर भी मूलतः परस्पर जुड़े हुए हैं। विज्ञान यदि धर्म से न जुड़े तो संहारक हो जाता है, इसी प्रकार विज्ञान की कसौटी पर धर्म में खोट निकले तो वह धर्म नहीं रहता। धर्म की महत्ता इस बात में है कि विज्ञान जहाँ इन्द्रियों द्वारा प्राप्त होनेवाले पदार्थों से ही सम्बन्धित है, वहाँ धर्म इन्द्रियों की पहुँच से परे जो पदार्थ हैं, उनके विषय में भी चिन्तन कराता है। धर्म का क्षेत्र विज्ञान के क्षेत्र से कहीं अधिक विस्तृत है। धर्म मनुष्य की प्रवृत्तियों का अध्ययन करता है। अतीन्द्रिय पदार्थों और प्रवृत्तियों का अध्ययन कराने के नाते धर्म का क्षेत्र विज्ञान से कहीं अधिक व्यापक है।

विज्ञान पदार्थों की खोज करता है परन्तु पथ-प्रदर्शन नहीं करता; पथ-प्रदर्शन केवल धर्म करता है। धर्म ही बताता है कि वैज्ञानिक आविष्कारों का सदुपयोग किस प्रकार करना है। यदि मनुष्य वैज्ञानिक आविष्कारों का दुरुपयोग करता है तो वह अधर्म के कारण और बुद्धि के दुरुपयोग के कारण करता है। धर्म तो विज्ञान का सदुपयोग ही सिखाता है।

विज्ञान ने मनुष्य के सुख और आराम के उपकरण बनाए हैं और दूरी को समीप ला दिया है, परन्तु विज्ञान ने मनुष्य को विलासी, अहंकारी और नास्तिक भी बना दिया है। सुख-सुविधा के साधनों के कारण व्यक्ति विलासी बन गया है, परन्तु धर्म मनुष्य को विलासिता को नियन्त्रित करने की प्रेरणा देता है। धर्म ने मनुष्य को संयम और सदाचार की प्रेरणा दी है। विज्ञान मनुष्य को प्रवृत्ति की ओर ले जाता है, जबकि धर्म प्रवृत्ति के साथ निवृत्ति का समन्वय करता है। विज्ञान ज्यों-ज्यों आविष्कार करता जा रहा है, त्यों-त्यों मनुष्य अहंकारी बनता जा रहा है। धर्म मनुष्य को अहंकार छोड़ने की प्रेरणा देता है और विनम्रता का पाठ पढ़ाता है। विज्ञान ने प्रकृति के रहस्य की खोज के कारण मनुष्य को नास्तिक बना दिया है। यह क्षुद्र प्राणी अहंकार के मद में अब उस परम सत्ता से भी इन्कार करने लगा है। इसके विपरीत धर्म मनुष्य को परमसत्ता का विश्वासी बनाता है और उसके प्रति श्रद्धा एवं निष्ठा उत्पन्न करता है।

विज्ञान का सम्बन्ध मस्तिष्क के साथ है तो धर्म का सम्बन्ध मस्तिष्क के साथ-साथ अन्तरात्मा से भी है। विज्ञान का सम्बन्ध बाह्य उन्नति से है और धर्म का सम्बन्ध आन्तरिक उन्नति से। मनुष्य को दोनों उन्नतियों की आवश्यकता है। विज्ञान और धर्म दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। न धर्म की महत्ता को अस्वीकार किया जा सकता है, न विज्ञान की महत्ता को। दोनों के बिना मनुष्य का निर्वाह नहीं हो सकता।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उक्त आधार पर स्पष्ट है कि धर्म का क्षेत्र विज्ञान की अपेक्षा अधिक व्यापक है। वैज्ञानिक को आविष्कार करने के लिए धैर्य और एकाग्रता को अपनाना पड़ता है। इन दोनों गुणों का आश्रय लिये बिना कोई भी वैज्ञानिक आविष्कार नहीं कर सकता। अन्ततः वैज्ञानिक को भी धर्म के नियमों का आश्रय लेना पड़ता है।

धर्म विज्ञान का विरोध कभी नहीं करता। यद्यपि ईसाई मत के अनुयायियों ने वैज्ञानिकों को सत्य के शोध और आविष्कारों के लिए अनेक यातनाएँ दीं, परन्तु भारतवर्ष में ऐसी कोई घटना नहीं घटी।

धर्म एक शाश्वत संस्था है। कोई युग ऐसा नहीं था जबकि धर्म की सत्ता को स्वीकार न किया गया हो। अफ्रीका की जंगली जातियों में भी ईश्वर की सत्ता का विचार पाया गया है। एस्कीमो जैसी असभ्य जातियाँ भी मरने के पश्चात् बर्फ में शव को गाड़कर उसके सिरहाने कुछ वस्तुएँ रख देती हैं ताकि आगे उसके काम आ सकें। इससे पता चलता है कि एस्कीमो भी आत्मा और भावी जीवन में विश्वास रखते थे। यहाँ पर यह बात ध्यान देने योग्य है कि नैतिकता यद्यपि सब मत-मतान्तरों का सार है, परन्तु केवल नैतिकता से बात नहीं बनती। परमात्मा और आत्मा मनुष्य के गले ऐसे पड़े हैं कि छुड़ाए नहीं छोड़े जा सकते।

धर्म मनुष्य की आवश्यकता है। जब से मनुष्य ने धरती पर आँखें खोलीं, तब से धर्म उसके साथ जुड़ा रहा है। मनुष्य कितना भी यत्न करे, धर्म को नहीं छोड़ सकता। साम्यवादी संस्थाबद्ध रूप से भी 'युद्ध की मर्यादा' के नाम पर धर्म का बहिष्कार करने में असमर्थ ही रहे हैं। मनुष्य की श्रेष्ठता ही धर्म (नैतिकता +आध्यात्मिकता) के आचरण से है। धर्म ही पशु और मनुष्य में विभाजक रेखा खींचता है। धर्म के कारण ही मनुष्य 'मनुष्य' कहलाने का अधिकारी बनता है।

आहारनिद्राभयमैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः॥

भोजन, नींद, भय और सम्भोग—ये पशुओं और मनुष्यों में सामान्य होते हैं। मनुष्य की उनसे श्रेष्ठता धर्म का आचरण करने के कारण है। जो धर्म से हीन है, वह पशुओं के समान है। □

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद स्वतःप्रमाण हैं

लेखक—**सुनहरीलाल छिब्बर**

१. वेद सृष्टि का आदि ज्ञान है। आर्यसमाज इसको मनुष्य-मात्र के लिए ईश्वरीय ज्ञान मानता है। यह ज्ञान अनूठा, सत्य और अनुभवसिद्ध है।

२. कणाद मुनि के मतानुसार 'बुद्धिपूर्वा कृति वेदे'—वेद में वाक्यरचना बुद्धि-पूर्वक है, अर्थात् सब बातें बुद्धि के अनुकूल हैं।

३. उदाहरणार्थ अथर्ववेद के काण्ड १९, सूक्त १५, मन्त्र ६ की ओर ध्यान दिलाया जाता है—

'ओम् अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरो यः।'

अर्थ—हे परमात्मन्! मुझे मित्र से अभय हो, अर्थात् भय न हो। शत्रु से अभय हो, जानकार से अभय हो और जो सामने है उससे भी अभय हो।

४. संशय होता है कि शत्रु से तो भय की सम्भावना युक्तिसंगत है; जिसे (केवल) जानते हैं और अन्य जो सामने है उससे भी भय हो सकता है, परन्तु मित्र से नहीं। उससे कैसे भय हो सकता है? वेद में मित्र से क्यों भय बताया गया? मित्र तो मित्रभाव का पालन करता हुआ रक्षा करेगा।

५. संशय इसलिए होता है कि मनुष्य का ज्ञान सीमित है। वेदज्ञान ईश्वरीय है—सर्वकालीन है। जिसे एक समय मनुष्य मित्र मानता है, कुछ काल के बाद दूसरी स्थिति में वह मित्र नहीं प्रतीत होता। उस स्थिति में वह भयप्रद हो जाता है। अतः उपरिलिखित वेदमन्त्र में भाव 'अभयं मित्राद्···' सत्य सिद्ध होता है।

६. आचार्य चाणक्य अपने नीतिग्रन्थ के अ० २ श्लोक ६ में कहते हैं—

'न विश्वसेत् कुमित्रे च, मित्रे चापि न विश्वसेत्।'

अर्थ—कुमित्र पर विश्वास न करे और मित्र पर भी (सदैव) विश्वास न करे। कारण? स्थितियाँ पलटती रहती हैं। मित्र सदैव मित्र सिद्ध नहीं होता।

७. पञ्चतन्त्र के 'मित्रसम्प्राप्ति' नाम द्वितीय तन्त्र में बृहस्पति नीति के आधार पर आचार्य विष्णु शर्मा ने कहा है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"न विश्वसेदविश्वस्तं, विश्वस्तं नाऽति विश्वसेत् ।
विश्वासाद् भयमुत्पन्नं मूलान्यपि निकृन्तति" ।।४५।।

अर्थ—अविश्वसनीय व्यक्ति का कभी विश्वास न करे और विश्वासी पर भी अधिक विश्वास न करे, क्योंकि अधिक विश्वास कर लेने पर जो भय उत्पन्न होता है—विपत्ति आती है, वह मूल (जड़) तक उखाड़ देनेवाली होती है।

८. आधुनिक दृष्टान्त—

भारत और रूस देश में चिरकाल से मैत्री है परन्तु हिन्दुस्तान टाइम्स मिति ३ सितम्बर १९८६ में छपे समाचार में लोकदल-नेता सुब्रह्मण्य स्वामी ने रूस पर कड़ा आक्षेप करते हुए कहा कि सोवियत-विश्व-एटलस में सम्पूर्ण अक्साईचिन वा अरुणाचल के इलाके को चीन का हिस्सा दिखलाया गया है। इससे भारत वा चीन में सीमा-निर्धारण-सम्बन्धी वार्तालाप पर कुप्रभाव पड़ता है। इस समाचार में यह भी लिखा गया है कि यह एटलस 'विदेश मन्त्रालय' में उपलब्ध है। श्री स्वामी ने प्रधानमन्त्री से अनुरोध किया कि रूस देश से अपनी नीति को बदलना आवश्यक है और आत्मनिर्भरता से निष्पक्ष नीति को अपनाते हुए विश्व की दूसरी महान् शक्ति (संयुक्त राष्ट्र अमरीका) से भी समभाव स्थापित किया जाए। इस स्थिति में मित्र देश रूस से भय उत्पन्न हुआ। यह आधुनिक अनुभव सिद्ध करता है कि हमारी बुद्धियाँ सीमित हैं। हमारे ज्ञान में त्रुटि सम्भव है। ईश्वरीय ज्ञान असीम का—त्रिकालज्ञ का ज्ञान है। वह सर्वकालीन है, शाश्वत सत्य है।

९. वेद सत्य ज्ञान की पुस्तक है। इस ज्ञान को प्रकाशित करने के लिए हम महर्षि दयानन्द के आभारी हैं।

१०. मनुस्मृति में मनु जी ने **'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्**—वेद सब धर्मों का मूल स्रोत है' कहा है। तदनन्तर **"धर्मजिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुति"**—धर्म-तत्त्व के जिज्ञासुओं के लिए वेद को परम प्रमाण बतलाया है। जिस विद्या को आजकल 'राजनीति' नाम देते हैं, उसको मनु जी ने 'राजधर्म—राजा के लिए पालनीय धर्म' कहा है।

मनु जी के मतानुसार वेद-मत प्रमाण की पराकाष्ठा है—परम प्रमाण है। तदनन्तर किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं रहती। अतः यह सिद्ध है कि 'वेद स्वतःप्रमाण हैं'।

□

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भागवत और महादेव

लेखक—**पण्डित शिवशंकर शर्मा** (मिथिला देश-निवासी, काव्यतीर्थ)

श्रीमद्भागवत चतुर्थ स्कन्ध में यह प्रसंग आता है कि एक समय किसी यज्ञ में उस समय के प्रसिद्ध ऋषि-मुनि, देव-देवी, ब्रह्मा आदि सब कोई इकट्ठे हुए। पश्चात् दक्ष प्रजापति अपने इष्ट मित्र, मन्त्री, महामन्त्री आदि के साथ उस महा-सभा में पहुँचे। इनको देख सभास्थ सब कोई उठ खड़े हो सम्मान कर अपने-अपने आसन पर पुनः बैठ गए। परन्तु महादेव और ब्रह्मा नहीं उठे। ब्रह्मा तो दक्ष प्रजापति के पिता ही थे, अतः उनके न उठने पर प्रजाप्रति को क्रोध नहीं हुआ। परन्तु महादेव (जो इनके दामाद थे) के उत्थानादि सम्मान न करने से दक्ष को अतिशय क्रोध हुआ। उस समय दक्ष ने अपने दामाद के विषय में यह कहा है—

लुप्तक्रियायाशुचये मानिने भिन्नसेतवे।
अनिच्छन्नप्यदा बालां शूद्रायेवीशतीं गिराम् ॥१३॥
प्रेतावासेषु घोरेषु प्रेतैर्भूतगणैर्युतः।
अटत्युन्मत्तवन्नग्नः व्युप्तकेशो हसन् रुदन् ॥१४॥

(चतुर्थ स्कन्ध, अध्याय २)

अर्थ—"इस क्रियाहीन, अपवित्र, मर्यादा तोड़नेवाले, अभिमानी महादेव को अपनी कन्या देना नहीं चाहता था, परन्तु जैसे शूद्र को कोई वेदवाणी प्रदान करे, वैसे मैंने कन्यादान किया ॥१३॥ यह घोर मरघटों में प्रेत और भूत-गणों को संग ले, उन्मत्त की नाईं नंगा, खुले केश हँसता और रोता फिरा करता है" ॥१४॥

चिताभस्मकृतस्नस्त्र, प्रेतरजास्थिभूषणः।
शिवाय देशोत्यशिवो मत्तोन्मत्तजनप्रियः।
पतिः प्रमथभूतानाम् तमोमात्रात्मकात्मनाम् ॥१५।४।२॥

अर्थ—"चिता की भस्म से स्नान कर, प्रेतों के पुष्पों की माला पहन, हड्डियों के गहने धारण कर विचरता है। नाम तो इसका शिव है और है अशिव। स्वयं आप भी मत्त है और मत्त लोग ही इसे प्रिय लगते हैं और केवल तमोगुण-स्वभाववाले प्रमथ और भूतों का पति है" ॥१५॥ इत्यादि महादेव के आचरण को

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्वसुर ने दिखलाया है।

इसमें सन्देह नहीं कि अपने घर के लोग जितना जानते व जान सकते हैं, उतना अन्य कोई भी नहीं। अस्तु, श्वसुर ने स्वयं कहा कि यह क्रियाहीन है, अपवित्र है, मर्यादा तोड़नेवाला है, इत्यादि। अब पाठक लोग विचार सकते हैं कि महादेव की निन्दा कौन करता है? यदि महादेव सचमुच वैसे ही थे तो दक्ष का उपर्युक्त वाक्य निन्दा नहीं; यदि वैसे नहीं थे, तो अवश्य है। परन्तु प्रतीत होता है कि महादेव यथार्थ में वैसे ही थे जैसा कि दक्ष ने उनका वर्णन किया है; क्योंकि निज श्वसुर से बढ़कर आचरण जाननेवाला और कौन हो सकता है? फिर ऐसे अपवित्र की पूजा से आदमी कैसे पवित्र हो सकता है!

आगे यह कथा है कि महादेव गणागणी नन्दीश्वर ने भी दक्ष को बहुत-कुछ अवाच्य सुनाए, ब्राह्मणों को श्राप दिया। तब ब्राह्मणशिरोमणि भृगु, ब्रह्मा के पुत्र ने दुरत्य-श्रापरूप ब्रह्मदण्ड चलाकर इस प्रकार महादेव के विषय में कहा है—

भवव्रतधरा येह ये च तान् समनुव्रताः।
पाखण्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरिपन्थिनः ॥२८॥
नष्टशौचा मूढधियो जटाभस्मास्थिधारिणः।
विशन्तु शिवदीक्षायां यत्र दैवं सुरासवम् ॥२९॥

अर्थ—"जो शिव का व्रत धारण करते हैं और जो उनका अनुसरण करते हैं, वे सच्छास्त्रों से उलटे चलनेवाले पाखण्डी हो जावें ॥२८॥ और आचारभ्रष्ट होकर मूढ बुद्धिवाले वे लोग जटा, भस्म, अस्थि धारण करके शिव की दीक्षा में प्रवेश करें कि जहाँ मदिरा और आसव यही देवताओं की नाईं पूजनीय गिने जाते हैं" ॥२९॥

ब्रह्म च ब्राह्मणाश्चैव यद्यूयं परिनिन्दथ।
सेतुं विधारणं पुंसां अतः पाखण्डमाश्रिताः ॥३०॥
एष एव हि लोकानां शिवपन्थाः सनातनः ॥
ये पूर्वे चानुसंतस्थुः यत्प्रमाणं जनार्दनः ॥३१॥

अर्थ—"मनुष्यों की मर्यादा को धारण करनेहारे वेद और ब्राह्मणों की निन्दा करते हो, अतएव तुम पाखण्ड में पड़े रहो ॥३०॥ लोकों का यही वेदमार्ग सनातन और कल्याणकारी है; क्योंकि पूर्व-ऋषियों ने इसका आश्रय लिया है और इसमें साक्षात् भगवान् प्रमाण हैं" ॥३१॥

तं ब्रह्मा परमं शुद्धं संता धर्मं सनातनम्।
बिगर्ह्य यातु पाखण्डं, देवं वो यत्र भूतराट् ॥३२॥

अर्थ—"सत्पुरुषों के सनातन मार्गरूप इस परम शुद्ध वेद की निन्दा करके तुम पाखण्ड में पड़ो कि जहाँ भूतों का पति तुम्हारा देवता है।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इन श्लोकों पर विचार करना चाहिये। इनसे भी स्पष्ट विदित होता है कि जिस समय यह पुराण बनाया गया था, उस समय भी शैवों के आचरण बहुत निन्दनीय और घृणित थे। **"यत्र दैवं सुरासवम्"** 'जहाँ पर सुरा ही देवता है'। इससे यह सिद्ध होता है कि मदिरापान इनके यहाँ प्रधान था। अभी तक शैव लोग अच्छे प्रकार के मद्यपान करते हैं। बिना मदिरा के कोई शैव नहीं हो सकता। शैव मत की ही एक शाखा शाक्त है। भारतवर्ष में अभी तक शतशः अघोरी पाए जाते हैं। ये प्रतिक्षण मदिरा पीते ही रहते हैं। जो आदमी मद्यपान करेगा, वह अवश्य ही पागल बना हुआ रहेगा। अतएव उपासकों ने महादेव को पागल बना रक्खा है। मद्य पीनेवाले पवित्र भी नहीं हो सकते। अतः महादेव को अपवित्र कहा है। इससे यह सिद्ध होता है कि उस समय भी शैव लोग क्रियाहीन, अपवित्र व मद्य-पायी थे। पुनः **'ब्रह्मच ब्राह्मणश्चैव'** इत्यादि से सिद्ध होता है कि यह शैव मत बिल्कुल वेद-विरुद्ध है। शैव और शाक्त व्यवस्था में लिखा है कि वैदिक धर्म माननेवाले की सद्गति नहीं होती और वैदिक मन्त्र से जो क्रिया की जाती है वह फल देने में समर्थ नहीं होती। यथा—

निर्वीर्याः श्रौतजातीयाः विषहीणोरगा इव।
सत्यादौ सफला आसन् कलौ ते मृतका इव॥
मद्वक्ता दुर्दिनं धर्म्मं, हित्वान्यद्धर्म्ममोहते।
अमृतं स्वगृहे व्यक्त्वा क्षीरमार्कं स वांछति॥
नान्याः पन्था मुक्तिहेतुरिहामत्र सुखाप्तये।
यथातन्त्रोदितो मार्गे मोक्षाय च सुखाय च॥

(महानिर्वाणतंत्र २)

अर्थ—महादेव जी पार्वती महारानी से कहते हैं कि "हे सुन्दरि! वैदिक सम्प्रदाय विषहीन सर्प के समान निर्वीर्य हो गए हैं। सतयुग आदि में उनका फल होता था, परन्तु कलयुग में तो वे मृतक के समान हैं। हे वरारोहे! मेरे मुख से निःसृत धर्म को छोड़ अन्य धर्म को जो चाहता है, वह मानो अपने गृह में विद्यमान अमृत को त्याग अर्क वृक्ष के दूध की इच्छा करता है। इस लोक और परलोक में सुख-प्राप्ति के लिए कोई अन्य मार्ग मुक्ति का नहीं है, जैसा कि तन्त्रोदित मार्ग मोक्ष और सुख के लिए है।"

ऐसे-ऐसे सहस्रशः अनेक वाक्य मिलते हैं जो बड़े ज़ोर-शोर से वैदिक धर्म का खण्डन करने में योजित किये गए हैं। इसलिए भागवतकर्त्ता का कथन कि "ये शैव लोग वेद के निन्दक हैं" बहुत ही सत्य है। यदि विचारदृष्टि से देखेंगे तो शैवादि धर्म की प्रवृत्ति वैदिक धर्म के लोप करने को ही है, क्योंकि दुराचार, मद्यपान, पञ्चमकार-सेवनादि दुष्ट कर्म, वेद मानते हुए कैसे कर सकते हैं!

इससे एक बात यह सिद्ध होती है कि पौराणिकों ने महादेव को वेद-विरोधी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

माना है। इसी कारण प्रायः महादेव असुरों के गुरु, वर देनेवाले रक्षक आदि माने गए हैं। यह बात वाणासुर की आख्यायिका से भी स्पष्ट होती है। अब पाठक लोग विचार करें कि महादेव का निन्दक वास्तव में कौन है? आर्य लोग तो इनकी बातों को ही दोहराते हैं। अपनी ओर से न तो नई बातें गढ़ते हैं और न कहते हैं। सनातनधर्मियों के सम्बन्ध में आर्य लोगों की कार्यवाही इस उदाहरण के सदृश है कि जैसे कोई निस्स्वार्थ हितचिन्तक आदमी अपने पड़ोसी से कहे कि मित्र, तुम्हारे गृह में अमुक-अमुक स्थान पर बड़े-बड़े करैत पड़े हैं, देखियो सावधान रहना! यद्यपि इस हितचिन्तकता के लिए आर्य लोग सम्प्रति सनातन-धर्मियों के कुवाच्य-वाण के लक्ष्य हो गए हैं तथापि कभी-न-कभी वह सुदिन अवश्य आएगा जबकि सनातनधर्मी लोग अपनी हानि को हानि और लाभ को लाभ समझेंगे। □

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अण्डा खाइए, हृदय रोग बुलाइए !

डॉ० योगेश कुमार अरोड़ा

१९८५ के नोबेल पुरस्कार प्राप्त करनेवाले अमेरिका के हृदय-रोग विशेषज्ञ, डॉ० माईकल एस० ब्राउन तथा डॉ० जोसेफ एल० गोल्डस्टीन, जिनकी हृदय-रोग की खोज पर विश्व का सर्वोत्तम पुरस्कार मिला, जिसकी राशि २,२५,००० डालर है। नोबेल पुरस्कार के ८४ वर्षीय इतिहास में यह राशि सबसे अधिक है। आप दोनों हृदय-रोग से बचने के लिए मांसाहार तथा अण्डे का सेवन न करने की सलाह देते हैं।

अमेरिका में पचास प्रतिशत मौतें सिर्फ हृदय-रोग के कारण होती हैं। नोबेल पुरस्कार के संयोजकों ने बताया कि डॉ० माइकल एस० ब्राउन तथा जोसेफ एल० गोल्डस्टीन दोनों अमेरिकन डॉक्टरों की आश्चर्यजनक खोज से अब इस रोग पर काबू पाया जा सकेगा। इनकी खोज के अनुसार हृदय-रोग वंशानुगत तथा खान-पान पर निर्भर करता है। इनके अनुसार यह रोग बच्चों को बचपन से शुरू हो जाता है, पर इसका पता काफी देर बाद चलता है। अब तक वर्षों से चली आ रही यह धारणा कि बच्चों को अण्डे खाने से नुकसान नहीं होता, विपरीत निकली। भले ही वे ऊपर से हृष्ट-पुष्ट दिखाई दें परन्तु अन्दर से हृदय-रोग ग्रस्त हो जाते हैं। खोज के अनुसार प्रत्येक मानव के शरीर में कोलस्ट्रोन नामक एक तत्त्व उत्पन्न होता है, यह भोजन द्वारा भी शरीर को प्राप्त होता है। यह तत्त्व वनस्पतियों में नहीं के बराबर होता है। पर मांस, अण्डों तथा जानवरों में प्राप्त वसा में प्रचुर मात्रा में होता है। इस तत्त्व में शरीर में सेल मेम्बरीन तथा हारमोन्स बनते हैं। यह तत्त्व शरीर के लिए आवश्यक भी है। लेकिन अगर यह कालस्टेरोल रक्त वाहिनी में जमना शुरू हो जाता है तो रक्त प्रवाह में बाधा डालता है। यह धीरे-धीरे जमते-जमते इतना अधिक हो जाता है कि रक्त प्रवाह रुक जाता है और हृदय काम करना बन्द कर देता है, इसे 'हार्ट अटैक' कहते हैं। अगर मस्तिष्क में रक्त न जा पाए तो उसे स्टोक कहते हैं। यही पदार्थ मूत्राशय में पथरी का रूप धारण करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नई खोज के अनुसार रक्त में पाये जाने वाले पदार्थ 'लोडेसिटि लिपोप्रोटीन' या एल० डी० एल० है जो कोलस्ट्रोल को रक्त में अपने साथ प्रवाहित करता है। शरीर में जिगर तथा अन्य भागों के सेलों में एक पदार्थ है जिसको रिस्पटर कहते हैं, वह एल० डी० एल० तथा कोलस्टेरोल को रक्त में से विलीन कर लेता है, जिसके परिणामस्वरूप रक्त प्रवाह में कोई बाधा नहीं आती है। इन वैज्ञानिकों के अनुसार जो व्यक्ति मांसाहार तथा अण्डे खाते हैं उनके शरीर में रिस्पेटरों की संख्या में कमी हो जाती है। इसकी कमी में रक्त के अन्दर कोलस्टेरोल की मात्रा अधिक हो जाती है। अधिक मात्रा होने से यह रक्त वाहिनियों में जमना शुरू हो जाता है तथा हृदय-रोग शुरू हो जाता है।

कोलस्टेरोल अण्डों में सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है जिसके परिणाम-स्वरूप चर्म रोग भी हो जाते हैं। अण्डे से कुछ लोगों को एलर्जी भी होती है। कुछ दिन पूर्व इण्डियन काउंसिल ऑफ एग्रीकलचर रिसर्च द्वारा किए गये सर्वेक्षण से पता चला कि फल, सब्जियाँ अण्डे तथा मांस में डी० डी० टी० के अंश पाए गये। अण्डों में डी० डी० टी० का अंश अधिक मात्रा में होता है, क्योंकि पोल्ट्री फार्म में मुर्गियों को महामारी से बचाने के लिए डी० डी० टी० आदि दवाइयों का खूब धड़ल्ले से इस्तेमाल होता है। परिणामस्रूप अण्डे खानेवाले लोगों के पेट में इन दवाइयों के अंश आ जाते हैं। यहाँ तक कि स्त्रियों के दुग्ध में डी० डी० टी० आदि के अंश पाए गये। इन दवाइयों के भयंकर परिणाम हो सकते हैं। अमेरिका आदि देशों में डी० डी० टी० पर रोक लगी हुई है पर हमारे देश में इस पर खुली छूट है।

अब तक अण्डों को सुपाच्य समझा जाता था, क्योंकि यह प्रयोग जानवरों पर किए जाते थे। कुछ वैज्ञानिकों ने जब इनका प्रयोग मनुष्यों पर किया तब पाया गया कि सुपाच्य नहीं होते हैं। वैसे भी अण्डे के छिलके पर लगभग १५००० सूक्ष्म छिद्र होते है जो कि सूक्ष्मदर्शी के द्वारा देखे जा सकते हैं। इनके द्वारा कई जीवाणु अण्डे में प्रवेश कर जाते हैं जो अण्डे को खराब कर देते हैं। आपने अण्डों के समूह से बदबू आती तो महसूस की होगी, वैसे भी अण्डे आठ डिग्री सैल्सियस के तापमान पर खराब होने शुरू हो जाते हैं। इनको रखने के लिए भारत में इतना तापमान रखना कठिन बात है। आजकल विदेशों में अण्डे आदि न खाने की राय दी जा रही है।

('नवभारत टाइम्स' से साभार)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारे विशिष्ट प्रकाशन

स्व० आनन्द स्वामी कृत पुस्तकें

प्रभु दर्शन	१२.००
तत्त्वज्ञान	१५.००
प्रभुमिलन की राह	१५.००
घोर घने जंगल में	१५.००
मानव और मानवता	२०.००
उपनिषदों का सन्देश	१२.००
दो रास्ते	१२.००
यह धन किसका है ?	१२.००
बोध कथाएँ	१२.००
दुनिया में रहना किस तरह	७.००
मानव-जीवन-गाथा	५.५०
प्रभुभक्ति	५.००
महामन्त्र	५.००
एक ही रास्ता	५.००
भक्त और भगवान्	५.००
आनन्द गायत्री-कथा	४.००
सुखी गृहस्थ	३.५०
सत्यनारायणव्रत-कथा	३.००
शंकर और दयानन्द	४.००

श्री रणवीर लिखित

आनन्द स्वामी जीवनी (उर्दू)	१०.००

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती कृत

महाभारतम् (तीन भागों में)	६००.००
वाल्मीकि रामायण	१००.००
चाणक्यनीति दर्पण	५०.००
प्रार्थना लोक	२५.००
प्रार्थना प्रकाश	४.००
प्रभात वन्दन	४.००
दिव्य दयानन्द	६.००
मर्यादा पुरुषोत्तम राम	१०.००
कुछ करो कुछ बनो	८.००

विद्यार्थियों की दिनचर्या	५.००
ब्रह्मचर्य गौरव	५.००
वैदिक विवाह पद्धति	४.००
आदर्श परिवार	८.००
ऋग्वेद सूक्ति-सुधा	२५.००
अथर्ववेद सूक्ति-सुधा	१५.००
यजुर्वेद-सूक्ति-सुधा	१२.००
सामवेद सूक्ति-सुधा	१२.००
ऋग्वेदशतकम्	४.००
यजुर्वेदशतकम्	४.००
अथर्ववेदशतकम्	४.००
सामवेदशतकम्	४.००
भक्ति संगीत शतकम्	३.००
चमत्कारी ओषधियाँ	६.००
घरेलू ओषधियाँ	६.००

प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार	५०.००
सत्य की खोज	५०.००
ब्रह्मचर्य सन्देश	१५.००

पं० मदनमोहन विद्यासागर

संस्कार समुच्चय	४५.००
सत्यार्थ सरस्वती	२५.००
ईश्वर प्रत्यक्ष	९.००

डॉ० भवानीलाल भारतीय

श्रीकृष्ण चरित	२५.००
श्यामजी कृष्ण वर्मा	२४.००
आर्यसमाज विषयक साहित्य परिचय	२५.००

स्वामी वेदानन्द सरस्वती

ऋषि बोध कथा	६.००
ईशोपनिषद्	४.५०

डॉ० प्रशान्त वेदालंकार

धर्म का स्वरूप	३५.००

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली-६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

वेदमीमांसा ५०.००

पं० चन्द्रभानु सिद्धान्तभूषण

महाभारत सूक्तिसुधा ४०.००

ओम्प्रकाश त्यागी

वैदिक साहित्य का संक्षिप्त परिचय ६.००

विष्णुदयाल एम० ए०

महर्षि का सच्चा स्वरूप ४.००

प्रो० रामविचार एम० ए०

आर्यसमाज का कायाकल्प कैसे हो ४.००

पं० सत्यपाल विद्यालंकार

श्रीमद्भगवद्गीता ८.००

सुरेशचन्द्र वेदालंकार

महकते फूल ६.००

पं० नरेन्द्र

हैदराबाद के आर्यों की साधना व संघर्ष ६.००

मनोहर विद्यालंकार

सरस्वती वन्दना ५.००

कवि श्री कस्तूरचन्द

ओंकार एवं गायत्री शतकम् ३.००

पं० राजनाथ पाण्डेय

वेद का राष्ट्रगान १.००

रामसिंह आर्योपदेशक

ओ३म् की व्याख्या २.००

प्रो० नित्यानन्द वेदालंकार

भगवत भजन जरूरी है १.५०

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय

मुक्ति से पुनरावृत्ति ३.००

पं० विश्वनाथ विद्यालंकार

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सरल अध्ययन २.००

पं० सुखदेव वेदवाचस्पति

नमस्ते की व्याख्या १.५०

बालोपयोगी

त्रिलोकचन्द विशारद

महर्षि दयानन्द २.५०

स्वामी श्रद्धानन्द २.५०

गुरु विरजानन्द २.५०

पं० लेखराम २.५०

स्वामी दर्शनानन्द २.५०

पं० गुरुदत्त २.५०

स्वामी दर्शनानन्द

बालशिक्षा-धर्मशिक्षा १.००

हरिश्चन्द्र विद्यालंकार

वैदिक शिष्टाचार २.००

पं० सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०

नैतिक शिक्षा प्रथम भाग ०.७५

नैतिक शिक्षा द्वितीय भाग ०.७५

नैतिक शिक्षा तृतीय भाग १.५०

नैतिक शिक्षा चतुर्थ भाग १.५०

नैतिक शिक्षा पंचम भाग २.००

नैतिक शिक्षा षष्ठ भाग २.००

नैतिक शिक्षा सप्तम भाग २.५०

नैतिक शिक्षा अष्टम भाग २.५०

नैतिक शिक्षा नवम भाग ३.००

नैतिक शिक्षा दशम भाग ३.००

कर्मकाण्ड की पुस्तकें

वैदिक सन्ध्या ०.५०

आर्यसत्संग गुटका १.५०

पंचयज्ञ प्रकाशिका ४.००

चित्र - चित्र - चित्र

महर्षि दयानन्द रंगीन २०×३० ३.००

महर्षि दयानन्द एक रंग १८×२२ २.००

गुरु विरजानन्द एक रंग १८×२२ २.००

स्वामी श्रद्धानन्द ,, ,, २.००

स्वामी दर्शनानन्द ,, ,, २.००

पं० हंसराज ,, ,, २.००

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली-६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan and Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार	५०.००
सत्य की खोज	५०.००
ब्रह्मचर्य सन्देश	१५.००
वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्व	४०.००
From Old Age to Youth	78.00
एकादशोपनिषद्	७५.००
उपनिषद् प्रकाश	६५.००
संस्कार-चन्द्रिका	५०.००
बुढ़ापे से जवानी की ओर	४०.००
होमियोपैथिक के मूल सिद्धान्त	३०.००
होमियोपैथिक औषधियाँ चित्रण	६०.००
रोग उनकी होमियो० चिकित्सा	७५.००
श्रीमद् भगवद् गीता	५०.००

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय-साहित्य

जीवात्मा	२५.००
आस्तिकवाद	१५.००
इस्लाम के दीपक	१२.००
मीमांसा प्रदीप	१०.००
आर्यसमाज	८.००
वैदिक धर्म और समाज	६.००
वैदिक मान्यतायें	६.००
इस्लाम और आर्यसमाज	६.००
हम क्या खायें ? घास या मांस	६.००
कर्मफल सिद्धान्त	४.००
वेद प्रवचन	२०.००
भारतीय पतन और उत्थान	५.००
शेक्सपियर के नाटक (सम्पूर्ण ३७ नाटक) तीन भाग	१५०.००
Light of Truth—	75.00
I and my God ,,	12.00
Worship ,,	12.00
Christianity in India ,,	12.00
Superstitions ,,	12.00

पं० उदयवीर शास्त्री

सांख्य दर्शन का इतिहास	५०.००
वेदान्त दर्शन का इतिहास	४०.००
ब्रह्मसूत्र (वेदान्त)	८०.००
सांख्य सिद्धान्त	४०.००
सांख्य दर्शन	२५.००
वैशेषिक दर्शन	४०.००
न्याय दर्शन	४०.००
योग दर्शन	४०.००

पं० सत्यकेतु विद्यालंकार कृत

आर्यसमाज का इतिहास (भाग १)	१००.००
,, ,, (भाग २)	११०.००
,, ,, (भाग ३)	१००.००
,, ,, (भाग ४)	१००.००
प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग	२८.००
दक्षिण पूर्वी और दक्षिणी एशिया में भारतीय संस्कृति	२३.००
म० एशिया व चीन में भारतीय ,,	२०.००
प्राचीन भारत	२८.००
भारतीय संस्कृति का विकास	२४.००
प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन	२४.००
एशिया का आधुनिक इतिहास	४४.००
प्रमुख राज्यों के संविधान	२४.००
समाज शास्त्र	३०.००
चाणक्य	२२.००
पतन और उत्थान	२६.००
सविता देवता भगवद्दत्त	३५.००
बृहस्पति देवता भगवद्दत्त	४०.००

स्वामी योगेश्वरानन्द सरस्वती कृत

आत्म विज्ञान हिन्दी	४०.००
बहिरंग योग हिन्दी	४५.००
ब्रह्म विज्ञान हिन्दी	७५.००
निर्गुण ब्रह्म हिन्दी	२५.००
दिव्य ज्योति हिन्दी	४०.००
प्राण विज्ञान हिन्दी	२५.००
दिव्य शब्द विज्ञान हिन्दी	४०.००
व्याख्यान माला (तीन भाग) हिन्दी	८५.००

गोविन्दराम हासानन्द नई सड़क दिल्ली-६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitized by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारे विशिष्ट संग्रहणीय प्रकाशन

आलोचना

प्रो० नित्यानन्द पटेल

प्रेमचन्द के उपन्यास साहित्य में सांस्कृतिक चेतना	125.00
छायावाद : नया मूल्यांकन	35.00
पूर्व और पश्चिम	35.00

उपन्यास तथा कथा साहित्य

शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

अपने पराये	12.00
अकेली	12.00
चन्द्रनाथ	12.00
अनुराधा	12 00
परिणीता	12.00
बैकुंठ का दानपत्र	12.00
बड़ी दीदी	12.00
देवदास	15.00
विराज बहू	12.00
विन्दु का बेटा	12.00
ब्राह्मण की बेटी	12.00
पण्डित मोशाय	12.00
देहाती समाज	15.00
मझली दीदी	12.00

सुनील शर्मा

हितोपदेश	25.00

वि० अनन्त

माँ	30.00
आज की सावित्री	30.00
दुल्हन	30.00
देवता	30.00
मुझे जीने दो	30.00
कसम	30.00

तकनीकी

हयात

सुबोध रेडियो ट्रांजिस्टर मैकेनिक	25.00
सुबोध ट्रांजिस्टर सर्विसिंग	20.00
सुबोध ट्रांजिस्टर गाइड	25.00

घर गृहस्थी

डा० लक्ष्मीनारायण शर्मा

गर्भ स्थिति, प्रसव और शिशुपालन	25.00

सुशीला कपूर

आधुनिक सिलाई-कटाई	25.00

मीनाक्षी धींगड़ा

पाक कला (पॉकेट साइज)	6.00
मिष्ठान्न कला (पॉकेट साइज)	6.00
अचार मुरब्बे चटनी (पॉकेट साइज)	6.00
शर्बत आइस्क्रीम स्ववेश (,,)	6.00

स्वास्थ्य

डा० लक्ष्मीनारायण शर्मा

हृदय रोग : कारण निवारण	20.00

डा० टी० बी० एल० जायसवाल

कैंसर : कारण और निवारण	20.00

वैद्य सुरेश चतुर्वेदी

आहार चिकित्सा	25.00

डॉ० समरसेन

योगासन से इलाज	20.00

डॉ० प्रकाश भारती

घर का डॉक्टर (होम्योपैथी)	25.00

विविध

डॉ० द्वारकाप्रसाद

योग का वरदान	25.00

अरुण अर्णव

सचित्र एशियाई खेल (9वें एशियाई खेलों तक)	25.00

राजीव वत्स

जूडो फॉर ऑल	15.00
जूडो आत्मरक्षा के लिए	10.00

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

गीताञ्जलि	25.00

कृष्ण विकल

वाणी	20.0

सुबोध पब्लिकेशन्स

2/3, अंसारी रोड, नई दिल्ली-110002

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बाल एवं प्रौढ़ साहित्य

आचार्य चतुरसेन

आदर्श बालक -1	6.00
आदर्श बालक -2	6.00

सन्तराम वत्स्य

लोक व्यवहर	5.00
संविधान की कहानी	10.00
भीष्म पितामह	6.00
वीर अर्जुन	6.00
महाबली भीम	6.00

यशपाल जैन

बोध कथाएँ	5.00
प्रेरक कथाएँ	5.00

श्यामचन्द्र कपूर

प्रत्येक का मूल्य 6.00

सच्चा सपूत	(जातक कथाएँ)
नंदिनी का वरदान	(रामायण की कथाएँ)
शरणागत की रक्षा	(वेद की कथाएँ)
कीर्ति का मार्ग	(महाभारत की कथाएँ)
सबसे बड़ा ज्ञानी	(उपनिषद् की कथाएँ)
फूलों की वर्षा	(पुराण की कथाएँ)
विश्वास का फल	(कुरान की कथाएँ)
जनता का प्यारा	(भागवत की कथाएँ)
सपने देखने वाला	(बाइबिल की कथाएँ)
आशा की ज्योति	(जैनग्रन्थों की कथाएँ)

पं० आनन्दकुमार

दो सूतरी पोलटिक	25.00

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

इक्यावन कहानियाँ	110.00
एक और श्रीगणेश	22.00
अपने-अपने दायरे	30.00

सुमेधा

हमारी एकता के प्रतीक त्यौहार	6.00

विनोदचन्द्र पांडेय 'विनोद'

ऋतुगीत		6.00
पितृभक्त बालक	**शरण**	6.00
तपस्वी बालक	**लक्ष्मी**	6.00
ज्ञानी बालक	**प्रभात कुमार**	6.00
भक्त बालक	**संगीता**	6.00
ईमानदार बालक	**सुदेश शरण**	6.00

शिवकुमार गोयल

क्रांतिकारी सावरकर	6.00

शान्ति भट्टाचार्य

बलिदान की कहानियाँ	6.00

स्कूल, कॉलेज में खेले जाने योग्य चिरंजीत के नाटक

हास्यमंच—हम-तुम	20.00
हास्यमंच—घर-दफ्तर	22.00
हास्यमंच—देश-विदेश	25.00
पाँच प्रहसन	25.00
मन्दिर की जोत	18.00
दादी माँ जागी	25.00
महाश्वेता (उपन्यास)	45.00
रतजगा	20.00

श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय

आर्यसमाज के मनस्वी विद्वान् श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय ने आर्य-वैदिक साहित्य लिखकर बड़ी सेवा की है। अभी हाल ही में उनकी कृतियों का संकलन करते हुए **श्री स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी** को उनके लिखे **हिन्दी-शेक्सपियर** प्राप्त हुए।

'शेक्सपियर के नाटक'

३७ नाटकों के कथानक तीन भागों में मूल्य १५०.००

सुबोध पब्लिकेशन्स

२/३ बी, अंसारी रोड, नयी दिल्ली-११०००२

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महामुनि कृष्णद्वैपायन व्यासजी प्रणीत

महाभारतम्

महाभारत धर्म का विश्वकोश है। व्यासजी महाराज की घोषणा है कि जो कुछ यहाँ है, वही अन्यत्र है, जो यहाँ नहीं है वह कहीं नहीं है। इसकी महत्ता और गुरुता के कारण इसे पञ्चम वेद कहा जाता है।

वेद को छोड़कर सभी वैदिक ग्रन्थों में प्रक्षेप हुए हैं। महाभारत भी इस प्रक्षेप से बच नहीं सका। महाभारत की श्लोक संख्या बढ़कर एक लाख पहुँच गई है। इसमें असम्भव गप्पों, अश्लील कथाओं, विचित्र उत्पत्तियों, अप्रासाङ्गिक कथाओं को ठूँसा गया। इतने बड़े ग्रन्थ को पढ़ना कठिन हो गया।

आर्यजगत् के ही नहीं भारत के प्रसिद्ध विद्वान्

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

द्वारा तैयार एक विशिष्ट संस्करण।

इस ग्रन्थ में असम्भव, अश्लील और अप्रासांगिक कथाओं को निकाल दिया गया है। लगभग १६,००० श्लोकों में सम्पूर्ण महाभारत पूर्ण हुआ है। श्लोकों का तारतम्य इस प्रकार मिलाया गया है कि कथा का सम्बन्ध निरन्तर बना रहता है।

☐ यदि आप अपने प्राचीन गौरवमय इतिहास की, संस्कृति और सभ्यता की, ज्ञान-विज्ञान की, आचार-व्यवहार की गौरवमयी झाँकी देखना चाहते हैं,

☐ यदि योगिराज कृष्ण की नीतिमत्ता देखना चाहते हैं,

☐ यदि प्राचीन समय की राज्य-व्यवस्था की झलक देखना चाहते हैं,

☐ यदि आप जानना चाहते हैं कि क्या कौरवों का जन्म घड़ों में से हुआ था? क्या द्रौपदी का चीर खींचा गया था, क्या एकलव्य का अंगूठा काटा गया था, क्या युद्ध के समय अभिमन्यु की अवस्था सोलह वर्ष की थी, क्या कर्ण सूतपुत्र था, क्या जयद्रथ को धोखे से मारा गया आदि

☐ यदि आप भ्रातृप्रेम, नारी का आदर्श, सदाचार, धर्म का स्वरूप, गृहस्थ का आदर्श, मोक्ष का स्वरूप, वर्ण और आश्रमों के धर्म, प्राचीन राज्य का स्वरूप आदि के सम्बन्ध में जानना चाहते हैं, तो एक बार इस ग्रन्थ को पढ़ जाइए।

विस्तृत भूमिका, विषय-सूची, श्लोक-सूची आदि से युक्त इस महान् ग्रन्थ का मूल्य है केवल ६००) रुपये। तीन भाग।

गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली-६

प्रकाशक-मुद्रक विजयकुमार ने सम्पादित कर अजय प्रिंटर्स, दिल्ली-३२ में मुद्रित करा वेदप्रकाश कार्यालय, ७७८ नयी सड़क, दिल्ली से प्रसारित किया।
Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi